सत्तर और अस्सी के दशक में दलित असंतोष के कारण

डॉ0 मो0 मरगूब रज़ा*

एक राजनीतिक इकाई के रूप में दलित वर्गों को सबसे पहले 1919 के अधिनियम में स्वीकृति मिली। दरअसल, नवम्बर–दिसम्बर 1917 में ब्रिटिश मंत्रिमंडल के भारत–मंत्री मांटेग्यू के भारत दौरे के समय, दलित वर्गों के प्रतिनिधियों ने पहली बार उनके समक्ष अपनी माँगें रखी थीं।[1] तब अछूतों का प्रतिनिधित्व करने वाले संगठनों में प्रमुख थे–मद्रास प्रेसीडेंसी के अछूतों का संघ पंचम कावली अभिवर्थी–अभिमान संघ मद्रास आदि द्रविड़ जन सभा और बंगाल के अछूतों का संगठन। इन संगठनों ने सरकार से यह अपील की थी कि उन्हें ब्राहम्णवादी जुए में पिसने से बचाया जाए। तब दलित वर्ग मिशन, बंबई की ओर से सर एन जी चंदावरकर ने भी मांटेग्यू से मुलाकात की थी। ज्ञातव्य है कि तब तक भारत के विभिन्न अचलों में दलित वर्गों के संगठन बनने लगे थे। वैसे (संभवतः) दलित वर्गों का सबसे पुराना सामाजिक–राजनीतिक संगठन था 1892 में गठित मद्रास आदि–द्रविड़ जन सभा। दलित वर्गों का पहला सम्मेलन 1910 के मध्य में चिन्दंबरम में आयोजित किया गया था और दूसरा 8 जुलाई, 1911 को मद्रास में।

1918–19 में गठित फ्रंचाइज कमिटी (मताधिकार समिति) ने भी दलित वर्गों के दावों पर विचार किया था। मनोनयन के जरिए नियुक्त किण जानक वाले गैर–सरकारी प्रतिनिधियों की सीटों की संख्या तय करते समय ने ऐसे महत्वपूर्ण वर्गों अथवा हितों के दावों को ध्यान में रखने की बात कही जो चुनाव की व्यावहारिक प्रणाली के जरिए प्रतिनिधित्व पाने की उम्मीद नहीं रखते थे। ऐसे ही समूहों में दलित वर्गों को शामिल करते हुए समिति ने प्रत्येक प्रांतीय परिषद में उनके प्रतिनिधियों को मनोनीत करने की अनुशंसा की थी–मद्रास में दो बंबई, बंगाल, युक्त प्रांत, बिहार और उड़ीसा, मध्य प्रांत और बेरार में एक–एक। पंजाब और असम में दलित वर्गों का कोई प्रतिनिधि मनोनीत करने की समिति ने जरूरत महसूस नहीं की थी।

बहरहाल, 1919 के अधिनियम में पहली बार विधायिका में दलित वर्ग प्रतिनिधियों के मनोनयन को मान्यता दी गई।[2] गवर्नर–जनरल ने केंद्रीय विधान सभा में जिन 14 गैर–सरकारी सदस्यों को मनोनयन किया, उनमें एक दलित वर्गों का प्रतिनिधि था।

1919 के अधिनियम के बाद बिहार और उड़ीसा विधान परिषद के लिए जो आम चुनाव हुआ, उसमें गांधीजी की कर्मभूमि नार्थ चंपारण से एक दलित उम्मीदवार रातलाल चमार भी खड़े हुए थे। विधान परिषद के साथ–साथ नगरपालिकाओं तथा जिला बोर्डो में दलित वर्गों के प्रतिनिधित्व का मसला भी इसी समय उठा। जनवरी 1922 में गणेश दत्त ने बिहार और उड़ीसा विधान परिषद में एक प्रस्ताव पेश कर सरकार से यह अनुशंसा की कि वह तमाम बार्डो तथा नगरपालिकाओं में दलित वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक सदस्य मनोनीत करे।[3] बहरहाल, इस वाद–विवाद के बाद गणेश दत्त का यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। 5 जिला बोर्डो और नगर पालिकाओं में दलित वर्गो के प्रतिनिधियों का मनोनयन यहीं से शुरू होता है।[4]

विधान परिषद में दलित वर्ग के प्रतिनिधि और इस समिति के सदस्य ब्रजनंद दास ने अपने 'नोट ऑफ डिसेंट' में कहा कि अगर दलित वर्गों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल बनाना संभव अथवा लाभदायक नहीं समझा जाता, तो संयुक्त निर्वाचन क्षेत्रों में ही उनके लिए कुछ सीट आरक्षित की जानी चाहिए।

1932 में पूना समझौते के बाद, बिहार और उड़ीसा फ्रेंचाइज कमिटी ने अपनी पुरानी राय बदलते हुए दलित वर्गो के लिए सीट आरक्षित करने का समर्थन किया और एक फार्मूला पेश किया।

1931 की जनगणना में दर्ज 31 जातियों को निम्नलिखित परिवत्तनों के साथ दलित वर्गों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। 1935 के भारत सरकार के तहत गठित होने वाली बिहार विधान सभा में दलित वर्गों के लिए 15 सीटें आरक्षित की गई। 22 जुलाई 1937 को जब श्रीकृष्ण सिंह के नेतृत्व में कॉंग्रेस मंत्रिमंडल ने शपथ ग्रहण किया तो दलित विधायकों के उपर्युक्त मांगों को ध्यान में रखते हुए एक दलित नेता (जगलाल चौधरी) को काबीना मंत्री और दूसरे दलित नेता (जगजीवन राम) को संसदीय सचिव बनाया गया।

सरकार ने समय–समय पर 1922, 1923 और 1932 में स्थानीय अधि ाकारियों को सर्कुलर जारी कर यह आदेश दिया है कि वे स्थानीय निकायों में प्रतिनिधि ात्व के लिए दलित वर्गो और अल्पसंख्यक समुदायों के हितों की सुरक्षा करें।

दलित वर्गों के प्रतिनिधियों द्वारा स्थानीय निकायों में प्रतिनिधित्व बढ़ाने का दबाव बनाने के परिणामस्वरूप कॉंग्रेसी मंत्रिमंडल को उनका मनोनयन थोड़ा बढ़ाना पड़ा। 20 जुलाई 1937 से 28 जनवरी, 1938 के बीच कुल 22 नगर पालिकाओं के चुनाव हुए। निर्वाचित दलित कमिश्नरों की संख्या तो कुल 280

***Ph.D, इतिहास विभाग, बी.एन.एम.यू. मधेपुरा (बिहार)**

निर्वाचित कमिश्नरों में बस तीन ही थी लेकिन कुल 77 मनोनीत कमिश्नरों का सातवाँ हिस्सा दलित वर्ग के सदस्यों के खाते आया (77 में 11) लेकिन दलित नेता इतने से संतुष्ट नहीं थे।

क्रमांक सं0	नगर पालिका	दलित जाति के कमिश्नर निर्वाचित	मनोनीत
1.	बाढ़	—	1
2.	खगौल	—	1
3.	गया	—	1
4.	टिकारी	—	1
5.	दाउद नगर	—	—
6.	डुमराव	—	1
7.	मोतीहारी	1	—
8.	मुजफरपुर	1	—
9.	लालगंज	—	—
10.	रोसड़ा	—	1
11.	जमालपुर	—	—
12.	भागलपुर	—	1
13.	कहलगॉव	1	1
14.	कटिहार	—	—
15.	फारबिसगंज	—	1
16.	झालदा	—	—
17.	हजारीबाग	—	1
18.	चतरा	—	1
19.	गिरीडीह	—	—
20.	लोहरदग्गा	—	—
21.	पुरूलिया	—	1
22.	रांची	—	—

स्त्रोत :– बिहार एण्ड उड़ीसा लेजिस्लेटिव काउंसिल, 1937

सरकार ने सरकारी सेवाओं में निम्न जातियों के सदस्यों की और अधिक नियुक्ति की गारंटी करने के लिए उठाए जाने वाले व्यावहारिक कदमों पर विचार किया है।

बहरहाल, जनवरी 1938 में विंध्येश्वरी प्रसाद वर्मा ने भी पुलिस सिपाहियों

में तथा सरकारी कार्यालयों में निम्न पदों पर अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों की भर्ती के सवाल पर विधान सभा में एक प्रस्ताव पेश किया था। 1938 में आबकारी और स्वास्थ्य मंत्री जगलाल चौधरी ने भी सरकारी सेवाओं में दलित वर्गो के लिए आरक्षण का समर्थन करते हुए कहा था, 'कम विकसित समुदायों को कुछ निश्चित वरीयता दी जानी चाहिए और यह वरीयता विभिन्न समुदायों के विकास की मात्रा में व्युत्क्रमानुपाती होनी चाहिए।

1 नवम्बर 1937 से जून 1938 तक विभिन्न जिलों में छोटी तनख्याह वाले पदों पर मात्र चार दलित उम्मीदवार नियुक्त किए गए।

निम्न पदों पर की गई नियुक्तियाँ

क्र0 सं0	जिला	नियुक्तियों की संख्या	नियुक्त दलितों की संख्या
1.	पटना	3	—
2.	गया	13	—
3.	शाहबाद	1	—
4.	मुजफरपुर	—	—
5.	सारण	5 (2 चपरासी)	—
6.	चंपारण	—	—
7.	दरभंगा	—	—
8.	भागलपुर	3	—
9.	मुंगेर	2	1
10.	पूर्णियाँ	4	—
11.	सथाल परगना	4	—
12.	रांची	26 (चपरासी)	1
13.	हजारीबाग	1	—
14.	पलामू	2	—
15.	मानभूम	4	2
16.	धनबाद	—	—
17.	सिंह भूम	1	—
	कुल	69	4

स्त्रोत : हेनिंधम, स्टीफेन; 'ऑटोनोमी एंड ऑग्रेनाइजेशन : हरिजन एंड आदिवासी प्रोटेस्ट मूवमेंट्स', इकॉनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली XVI, नं. 27, जुलाई 4, 1981

कांग्रेस मंत्रिमंडल के कार्यकाल के दौरान स्थानीय निकायों तथा सरकारी नौकरियों में दलितों के प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर दलित नेताओं में काफी नराजगी

थी। 16 अक्टूबर 1939 को राम प्रसाद के प्रश्न के जवाब में विनोदानंद झा ने उस वर्ष प्रत्येक जिले के जिला बोर्डो में नामजद सदस्यों का निम्नलिखित ब्यौरा पेश किया।

आजादी के समय दलितों की स्थिति

जुलाई, 1949 में हरिजन उत्थान के लिए पंचवर्षीय योजना तैयार करने के उद्देश्य से बिहार सरकार ने एक हरिजन जाँच समिति का गठन किया था।[5] समिति ने अपनी जाँच–पड़ताल के क्रम में पटना, मुजफरपुर, आरा, बेतिया, भागलपुर, पुरूलिया, रांची, दरभंगा, छपरा और डाल्टनगंज का दौरा किया। समिति ने हरिजनों की वास्तविक जरूरतों और उनको पूरा करने के उपायों पर विचार करते हुए अपनी अनुशंसाओं को आर्थिक, शैक्षणिक, समाजिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक और राजनीतिक श्रेणियों में वर्गीकृत किया।

1. हरिजनों की आर्थिक दुर्दशा में कोई खास फर्क नहीं आया था। गाँवों में अधिकांश हरिजन कमिया थे। उनसे बेगार श्रम लिया जाता था। 1920 के बिहार एंड उड़ीसा कमियौती एग्रीमेंट एक्ट से उन्हें कोई राहत नहीं मिली थी। वे कर्ज में डूबे थे और सूद की दर सलाना 20 से 75 फीसदी तक थी। समिति ने कमियौती एक्ट के बारे में लोगों को जागरूक करने और बेगार तथा कमियौती को दंडनीय अपराध घोषित करने की सिफारिश की थी।
2. समिति ने पाया कि हरिजनों के पास प्रायः अपना घर नहीं था। गाँवों में अलग–अलग टोलों में रहते थे, जहाँ मामूली सुविधाएँ भी नहीं थी। शहरों में भी वे काफी गंदी बस्तियों में बसे थे और मैला ढोने से लेकर कपड़े में लगे थे। समिति ने गाँवों में परती जमीन हरिजनों को बंदोबस्त करने, हर साल उनके लिए लगभग 200 घर बनवाने और इन घरों में सस्ते दर पर बिजली उपलब्ध कराने का सुझाव दिया था। साथ ही, दो सौ परिवारों को एक साझा कुटीर उद्योग के साथ समुदायिक रूप से बसाने का भी प्रस्ताव था। नगरपालिका के भंगियों के लिए समिति ने समान काम के लिए पुरूष और महिलाओं को समान वेतन देने, स्थायी रोजगार की व्यवस्था करने, सप्ताहिक पगार देने और मान्यता प्राप्त एजेसियों से नकद ऋण देने का सुझाव रखा था।
3. शिक्षा के क्षेत्र में स्थिति यह थी कि 1951 में मैट्रिक की परीक्षा देने वाले कुल 37,721 छात्रों में हरिजन छात्रों की संख्या 392 थी। समिति ने मुत ट्यूशन, आम तौर तकनीकी संस्थानों में भर्ती, स्कूल तथा कॉलेज लाइब्रेरी की सुविधा, पुस्तक, अनुदान, छात्रवृति तथा छात्रावासों के प्रबंध का सुझाव रखा था।

4. समिति ने क्रिमिनल ट्राइब्स एक्ट कमिटी की सिफारिशों का भी समर्थन किया था। हालाँकि रिपोर्ट प्रस्तुत करने तक यह एक्ट रद्द किया जा चुका था।
5. समिति ने पाया कि स्थानीय निकायों और अन्य प्रतिनिधि संथाओं में दलितों का प्रतिनिधित्व नाम मात्र ही था। यही हाल सरकारी नौकरियों में भी था।

समिति की नजर में राजनीतिक इच्छा–शक्ति की कमी के कारण इस सिलसिले में नीतियों का कार्यान्वयन नहीं हो पाया था। निर्देशों का पालन करने के बजाए उनका उल्लंघन ज्यादा हुआ था। समिति ने सिफारिश की थी कि सरकारी सेवाओं में जब तक हरिजनों की संख्या प्रदेश में उनकी आबादी के अनुपात के बराबर नहीं हो जाती, तब तक तमाम पदों पर उन्हें बीस प्रतिशत आरक्षण दिया जाए।[6]

कल्याण विभाग में (जिस विभाग का उद्देश्य हरिजन–आदीवासी उत्थान था) हरिजनों की नियुक्ति का मामला इसी समय उठा था।[7] 1948 से 1949 के अप्रैल तक कुल 16 नियुक्तियाँ की गई। लेकिन इनमें सिर्फ एक हरिजन चपरासी पद पर बहाल हुआ।[8] 7 फरवरी 1948 को ही बिहार सरकार ने प्रदेश सरकार के अधीन पदों और सेवाओं में हरिजनों के लिए आरक्षण का आदेश जारी कर दिया था।[9]

बिहार हरिजन बिल, 1949

1920 और 1930 के दशक में चले अस्पृश्यता–निवारण आंदोलन की स्वाभाविक परिणति के रूप में आजाद भारत की बिहार विधान सभा में फरवरी, 1949 में जगलाल चौधरी ने बिहार हरिजन (रिमूवल ऑफ सिविल डिजेबिलिटीज) बिल, 1949 पेश किया। इस बिल के तहत अस्पृश्यता को दंडनीय अपराध घोषित करते हुए, उसके लिए छः महीने की सजा और पाँच सौ रूपए के जुर्माने का प्रावधान था।[10] यह बिल शीघ्र ही अधिनियम बन गया। इस अधिनियम को और सख्त बनाते हुए 'दि बिहार हरिजन (रिमूवल ऑफ डिजेबिलिटीज) एमेंडमेंट एक्ट, 1951' पारित किया गया।

इस संशोधित अधिनियम के पारित होने के करीब दो साल बाद इसकी धज्जियाँ उड़ाते हुए संत विनोबा और उनके दल पर वैद्यनाथधाम (देवघर) मंदिर के सामने हमला हुआ–महात्मा गाँधी पर हुए हमले के करीब 19 साल बाद।

मुंद्रिका सिंह ने 23 सितंबर को विधान सभा में काम रोको प्रस्ताव रखा। पहले तो प्रस्ताव की शब्दावली को लेकर ही काफी हंगामा हुआ। मूल प्रस्ताव में पंडों के दल द्वारा विनोबा पर हमले और संत विनोबा भावे की रक्षा करने में तथा सार्वजनिक पूजा–स्थल, मंदिर में हरिजनों के प्रवेश के संवैधानिक अधिकार को संरक्षण देने में सरकार की विफलता की बात कही गई थी। सदन ने हमले की निंदा की लेकिन सरकार ने अपनी उदासीनता अथवा असफलता की बात स्वीकार नहीं की।[11]

3 दिसंबर 1952 को, उपर्युक्त घटनाओं में काफी पहले, बिहार दलित वर्ग संघ द्वारा अपने सम्मान में आयोजित एक समारोह में जगजीवन राम ने लोगों को याद किया कि स्वतंत्रता आंदोलन में हरिजनों का योगदान अन्य उच्च वर्गो की तुलना में रत्ती भर भी कम नहीं रहा।[12]

यह सोचना गलत है कि हरिजनों में क्रांतिकारी भावना का अभाव है या फिर वे अन्याय और बर्बरताओं के खिलाफ अपना सिर नहीं उठा सकते.....अगर लंबे समय तक हरिजनों को उनके न्यायाचित अधिकारी से वंचित रखा गया, तो भारत वर्गयुद्ध में उलझ सकता है।

दरअसल, पिछड़ों और दलितों की इस गोलबंदी का मकदस सरकार और पार्टी पर दबाव पैदा करना था। यह कांग्रेस अंदरूनी राजनीति और रस्साकशी का एक अंग था। इस गोलबंदी से मुख्यमंत्री श्रीकृष्ण सिंह भी काफी नाराज थे और उन्होंने जातीयता फैलाने के प्रयासों पर खुलकर बोला भी था। हालांकि पिछड़ा वर्ग ने अपने उसी अंक में इस पर टिप्पणी करते हुए लिखा, निगत 6 मई, 1953 को तारापुर में बिहार के मुख्यमंत्री डॉ. श्रीकृष्ण सिंह ने किसानों के बीच अपने भाषण क्रम में पिछड़ा वर्ग के दलित वर्ग के नेताओं के प्रति जो निराधार आरोप लगाया गया है, उस पर पिछड़ी वर्ग परिवार रोष एवं क्षोभ प्रकट करता है।

इसी समय 8 से 11 दिसंबंर, 1954 को पिछड़ी वर्ग आयोग ने दो दलों में बिहार के विभिन्न जिलों का दौरा किया। इसने करीब 2000 लोगों के साक्ष्य लिए, अनेक संगठनों से मुलाकात की। करीब 200 संस्थाओं ने उसे स्मारपत्र सौंपा। रघुनंदन राम, जगलाल चौधरी, जयदेव प्रसाद, दुलारचंद राम, किशोर राम, आदि विधायकों और पार्षदों ने भी आयोग से मुलाकात की। उन्होंने भी अस्पृश्यता समाप्त करने, पर्याप्त शैक्षणिक सुविधाएँ देने तथा सरकारी सेवाओं में नियुक्तियों की गारंटी करने की माँगें रखीं। बेतिया में विधायक जगन्नाथ प्रसाद स्वतंत्र के नेतृत्व में 500 हरिजन कार्यकर्त्ता आयोग से मिले और हरिजनों को जमीन देने की माँग की। चंपारण जिला दलित वर्ग संघ तथा बेतिया सबडिविजनल संघ की ओर से भी ज्ञापन दिए गए।

27 अक्टूबर, 1955 को पटना के अंजुमन इस्लामिया हॉल में आयोजित बिहार राज्य पिछड़ी वर्ग सम्मेलन का उद्घाटन भी जगजीवन राम ने ही किया। सम्मेलन में केन्द्र सरकार द्वारा गठित पिछड़ा वर्ग आयोग के रिपोर्ट और उसकी अनुसंशाओं पर चर्चा हुई। रिपोर्ट को सार्वजनिक करने तथा उसे लागू करने की माँग की गई।

सम्मेलन ने यह चिंता जताई कि अगर पिछड़े/दलित समुदायों के लड़कों के लिए समुचित वजीफों, छात्रावासों तथा पाठ्यपुस्तकों की व्यवस्था नहीं की गई

तो 95 फीसदी ऐसे लड़के बिना किसी शिक्षा के ही रह जाएँगें। बिहार में तो उसका और भी महत्त्व था क्योंकि यहाँ प्रदेश सरकार ने अपनी प्रशासनिक रिपोर्ट में यह स्वीकार किया कि कल्याण विभाग के समक्ष सबसे बड़ी समस्याओं में से एक पिछड़े वर्गो के लड़कों की शिक्षा की समस्या है।

उपर के विवरण से स्पष्ट है कि दलित आंदोलन जहाँ एक ओर कांग्रेस के उपर दबाव बनाने के लिए पिछड़े वर्गो के साथ अपने संश्रय के संकेत दे रहा था, वहीं, नीचे जमीनी स्तर पर उसे कम्युनिस्ट पार्टी की ओर से चुनौती मिल रही थी और उन दिनों कम्युनिज्म के विश्वव्यापी प्रसार, खासकर चीनी क्रांति की पृष्ठभूमि में यह चुनौती काफी वास्तविक थी।

स्वतंत्रता के बाद, सरकारी और गैर सरकारी दोनों स्तरों पर दलित वर्गो के उत्थान के लिए दीर्षकालिक तथा फौरी योजनाओं पर भी काफी चर्चा चली। उनेक कार्यक्रमों और योजनाओं के प्रारूपों पर बहस के बीच सर्वानुमति के कई मुद्दे उभरे और उन्हें कानून तथा आधिकारिक कार्यक्रम का हिस्सा भी बनाया गया। उपर के के विवरणों को देखने से भी हम दलित उत्थान के ऐसे कार्यक्रम का अंदाजा लगा सकते हैं।[13]

संदर्भ :–

1. कांबले, जे.आर.; 'राइज एंड अवेकनिंग ऑफ डिप्रेस्ड क्लासेस इन इंडिया; नई दिल्ली' 1979।
2. बिहर एंड उड़ीसा लेजिस्लेटिव काउंसिल, क्वेश्चंस एंड आंसर्स, 18 मार्च 1927।
3. बिहार एंड उड़ीसा लेजिस्लेटिव काउंसिल; 31 जनवरी, 1922 खंड प्ट, पृ. 422–433।
4. दि सर्चलाइट; 30 अप्रैल, 1922।
5. दि इंडियन नेशन; 2 दिसंबर, 1952।
6. विधान सभा वाद विवाद; 3 फरवरी, 1947, पृ. 205।
7. विधान सभा वाद विवाद; 26 अप्रैल, 1949।
8. वही; 5 दिसंबर, 1949।
9. वहीं; 23 अगस्त, 1954।
10. विधान सभा वाद विवाद, खंड 6, संख्या 8; 22 और 23 फरवरी, 199।
11. वहीं; खंड 3, संख्या 13, 23 सितंबर, 1953।
12. पहले अध्याय में वर्णित कमिया की मजदूरी से तुलना कीजिए।
13. पिछड़ा वर्ग आयोग का प्रथम प्रतिवेदन, पटना, 1975।

****